REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 1 | OCTOBER - 2018

समकालीन संदर्भ में कमलेश्वर के उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' की सार्थकता

डॉ. सुरजीत कौर
खालसा कालेज अमृतसर.

आधुनिक भारतीय साहित्य के अन्तर्गत 'कमलेश्वर' एक सुपरिचित एवं सम्माननीय नाम है। बहु मुखीप्रतिभा-सम्पन्न इस स्वनामधन्य साहित्यकार ने भारत के समाज, इतिहास और संस्कृति का गहन अनुशीलन करके इसे अपने साहित्य में प्रतिफलित किया है। 'कितने पाकिस्तान' उनके प्रौढ़ चिन्तन पर आधारित ऐसी ही कालजयी उपन्यास रचना है। जिसको पढ़ते हु एमानव-बुद्धि भ्रमित होने लगती है कि यह उपन्यास है या कोई रहस्य-रोमांच से भरी रोमांस कथा या राजनीति के प्रपंच से भरी कोई दास्तां अथवा एक इनसाइक्लोपीडिया, जिसमें सभी सभ्यताओं व संस्कृतियों पर गहन चिन्तन-मनन् किया गया है। साहित्य की विधा का यह कोई भी रूप हो, लेकिन पाँच हजार वर्षों के इतिहास को अपने में समेटे हु ए, जादू की छड़ी नुमा यह ग्रंथ कमलेश्वर ने निश्चय ही बड़ी लम्बी तैयारी के बाद लिखा और 363 पृष्ठोंको लिखने के लिए जिस लेखकीय सजगता एवं प्रतिबद्धता की नितांत आवश्यकता थी, वह गहन-गम्भीर दूरदर्शिता व प्रौढ़ प्रतिबद्धता निश्चय ही कमलेश्वर में थी। 'झूठा सच, 'आधा गाँव, 'पिंजर, 'तमस, जैसे उपन्यास निःसन्देह भारत-पाक विभाजन को बाख़ूबी दिखाते हैं, लेकिन वैश्विक स्तर पर पनपे अथवा पनप रहे 'पाकिस्तानों को 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास के माध्यम से पूरे विश्व के सामने रखने का सुदृढ़ प्रयास अगर कमलेश्वर ने किया तो इसका श्रेय उनकी रचनात्मक प्रतिबद्धता को जाता है।

विवेचित उपन्यास भारतीय समाज, इतिहास तथा संस्कृति की बहु आयामीतस्वीर अपने में समाहित किए हु एहै। 'कितने पाकिस्तान' के रूप में विश्व-सभ्यता व संस्कृति को कटघरे में खड़े करने का और इतिहास के साथ सार्थक व सकारात्मक छेड़छाड़ करने का साभिप्राय साहस केवल कमलेश्वर जैसे बहु मुखीप्रतिभा-सम्पन्न रचनाकार के लिए ही संभव था। 'कितने पाकिस्तान' से पूर्व कमलेश्वर - 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ (1957), 'डाक (1962), 'लौटे हु एमुसाफिर (1963), 'तीसरा आदमी' (1964), 'समुद्र में खोया हु आआदमी' (1965), 'काली आँधी' (1974), 'आगामी अतीत' (1976), 'वही बात' (1980), 'सुबह, दोपहर, शाम' (1985), जैसे उपन्यास हिन्दी-जगत् को दे चुके थे। 'कितने पाकिस्तान' का प्रथम संस्करण सन् 2000 ई. में आया।

समय तथा इतिहास को नायक तथा महानायक के रूप में लेकर, कमलेश्वर ने अदीब की कचहरी बैठाकर, विश्व भर की समस्त सभ्यताओं में चलने वाले संघर्ष की समस्याओं पर चिन्तन-मनन् करने के उपरान्त यह स्पष्ट किया है कि सामाजिक, वैयक्तिक, पारिवारिक एवं वैश्विक संघर्ष, सिर्फ अपने मज़हब, इज़्ज़त, अपनों की सुरक्षा तथा अपनी आज़ादी की सुरक्षा हेतु हो रहे हैं। उन्होंने कामना की है कि यह दकियानूसी प्रवृ त्तिख़त्म हो, ताकि फिर कोई नर-संहार न हो, फिर कोई पाकिस्तान न बने। उपन्यास की भूमिका में कमलेश्वर का कथन है- ''यह उपन्यास मन के भीतर लगातार चलने वाली एक जिरह का नतीजा है।''1 वे आगे लिखते हैं- ''आख़िर इस उपन्यास को कहीं तो रुकना था। रुक गया। पर मन की जिरह अभी भी जारी है।''2 विदित है, अपने देशकाल के प्रति सजग रहने वाले प्रत्येक ईमानदार साहित्यकार को यह जिरह करनी ही पड़ती है। इसके अभाव में लेखकीय उत्तरदायित्व का निभना भी संभव नहीं है।

विष्णु प्रभाकर के शब्दों में कहें, तो - ''इसने उपन्यास के बने-बनाये ढाँचे को तोड़ दिया है और लेखकीय अभिव्यक्ति के लिए सब कुछ सम्भव बना देने का दुर्लभ द्वार खोलकर एक नया रास्ता दिखाया है.... यह एक नया प्रयोग है।''3

इस सम्बन्ध में केरल के कोविद अनन्तमूर्ति अनंगम का कथन उल्लेखनीय है- ''इस उपन्यास ने प्रेमचन्द से बहुत आगे जाकर जिस वैश्विक चिन्ता से हमें जोड़ा है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। प्रयोग के धरातल पर तो (इसने) कमाल किया है। प्रेमचन्द प्रयोगवादी नहीं थे; लेकिन प्रयोगवादी वात्स्यायन को उन्होंने सदियों पीछे छोड़ दिया है। (इनकी) भाषा ने जैनेन्द्र की निजी भाषा से हिन्दी को मुक्त करके उस भाषा और मुहावरे को पकड़ा है, जो भविष्य की भाषा है।''4

सच तो यह है कि लाला श्रीनिवासदास एवं प्रेमचन्द की औपन्यासिक विरासत को कमलेश्वर ने 'कितने पाकिस्तान' के बयालीस अध्याय में वैश्विक परिप्रेक्ष्य में निखारा है। इस उम्मीद के साथ कि भारत ही नहीं, दुनिया भर में एक के बाद दूसरे पाकिस्तान बनाने की लहु से लथपथ परम्परा अब खत्म हों...।

'कितने पाकिस्तान' एक सहज प्रेम-प्रसंग से शुरु होता है, लेकिन फ्लैशबैक पद्धति का प्रयोग करते हुए लेखक हमें अनादिकाल से लेकर आज तक के संसार का वास्तविक रूप दिखाता है। कमलेश्वर इस उपन्यास में बताते हैं कि पाकिस्तान केवल 1947 ई० में ही नहीं बना, बल्कि ऐसे पाकिस्तान अनादिकाल से बनते रहे हैं, बन रहे हैं और अगर वक्त रहते न संभले, तो बनते रहेंगे। यही नहीं पाकिस्तान में से कई और पाकिस्तान पैदा होते हैं - ''पाकिस्तान से पाकिस्तान पैदा होता है.... यह छूत का एक रोग है। जब तक धर्म, नस्ल, जाति और दुनिया की पहली शक्ति बनने का नशा नहीं टूटता, जब तक सत्ता और वर्चस्व की हवस नहीं टूटती, तब तक इस धरती पर पाकिस्तान बनाये जाने की नृशंसपरम्परा जारी रहेगी।''5

पाकिस्तान और कुछ नहीं, केवल और केवल 'नफ़रत' का नाम है। कमलेश्वर लिखते हैं- ''लेकिन अब तो सब मुल्कों में नफ़रत का एक पाकिस्तान बनाने की कोशिशें जारी हैं.... क्या हुओ बोस्निया में, क्या हुआ साइप्रस में, क्या हुआ है, तब के टूटे सोवियत यूनियन और अब के बने रशियन फेडरेशन में। क्या हो रहा है आज के अफगानिस्तान में? हर व्यक्ति नफ़रत के सहारे अपने ही लोगों के खिलाफ एक दूसरा पाकिस्तान ईजाद करना चाहता है।''6

ध्यातव्य है, यह नफ़रत पैदा होती है- सामाजिक व्यवस्था के अव्यवस्थित व्यवहार, वैषम्य, वर्ण-भेद के कारण, सत्ता-लोलुप राजनेताओं के भ्रष्ट आचरण के परिणामस्वरूप और धर्म अथवा सम्प्रदाय को हथियार के रूप में इस्तेमाल करने पर।

राजनैतिक धरातल पर अगर 'कितने पाकिस्तान' का मूल्यांकन करें तो स्पष्ट हो जाता है कि मसला चाहे बाबरी मस्जिद का हो, चाहे राम जन्मभूमि व राम मन्दिर का, अन्तिम फ़ायदा राजनेताओं को ही होता है। पाकिस्तान अगर केवल नफ़रत का नाम है, तो इस नफ़रत का ज़हर सम्प्रदाय, धर्म, मज़हब के नाम पर लोगों की नसों में डालने का काम राजनीति के पैरोकार ही करते है। अंग्रेज़ अगर षड्यन्त्र की राजनीति न करते, तो आज 'पाकिस्तान' नाम का देश दुनिया के नक्शे पर न होता; न ही इब्राहिम लोदी, जो मूलतः हिन्दू था, द्वारा बनाई गई बाबरी मस्जिद को 'बाबर' के नाम के नीचे रखकर, हिन्दुओं को मुसलमानों के विरुद्ध खड़ा किया जाता; न ही बाबरी मस्जिद के शिलालेख को जानबूझ कर बिगाड़ा जाता, जिस पर इब्राहिम लोदी का नाम दर्ज था; न 'बाबरनामा' के वे पन्ने फाड़े व ग़ायब किए जाते, जो हिन्दुओं को यह विश्वास दिला चुके हैं कि बाबरी मस्जिद बाबर द्वारा राम-मन्दिर को तोड़कर बनाई गई। हालांकि इन सब भ्रान्तियों का जवाब अभी भी इतिहास देता है, दे रहा है; क्योंकि इतिहास मिटाये से नहीं मिटता। आवश्यकता सच को जानने के लिए, इतिहास पर पड़ी धूल को हटाने की है, ताकि कोई ब्रिटिश सरकार या ब्रिटिश सरकानुमा कोई राजनैतिक पार्टी बाबरी मस्जिद व राम-मन्दिर का झगड़ा पैदा कर एक नए पाकिस्तान का निर्माण न कर सके।

उपन्यास उपरोक्त विभिन्नि तथ्यों को 'कितने पाकिस्तान' में इस प्रकार स्पष्ट करता हैः ''हिजरी 930 यानी करीब 17 सितम्बर 1523 में इब्राहीम लोदी ने उस मस्जिद की बुनियाद रखवायी थी और 10 सितम्बर 1524 ई० में बनकर तैयार हुई, जिसे अब बाबरी मस्जिद कहा जाता है। यही बताने मैं बाबर के पास गया था। (बाबर की कब्र पर, काबुल में, 1910 ई० में, ए० फ्यूहर ने कहा- 'उस खुतबे को वक्त ने नहीं, इन लोगों ने बर्बाद किया है, जो इस बाबरी मस्जिद और रामजन्म भूमि मन्दिर को ज़िन्दा रखना चाहते हैं)''7 कथाकार आगे लिखता है- ''ए० फ्यूहर ने बीच में टोका-हमारी पालिसीज़ बदलीं और तब यह तय किया गया कि हिन्दू और मुसलमान, जो 1857 में एक हुए थे, उन्हें अलग-अलग रखा जाए.... नहीं तो अंग्रेज़ी हकूमत चलने नहीं पाएगी। इसीलिए मैंने बाबरी मस्जिद पर लगा इब्राहिम लोदी का जो ख़ुतबा पढ़ा था, उसे जान-बूझ कर मिटाया.... लेकिन मैंने उसका जो तर्जुमा किया था, वह 'आर्कियालॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया' की फाइलों में पड़ा रह गया। उसे ख़त्म करने का विचार किसी को नहीं आया। इसी के साथ 'बाबरनामा' के वे पन्ने ग़ायब किये गए; जो इस बात का सुबूत देते हैं कि यह बाबर अवध गया तो ज़रूर, लेकिन कभी अयोध्या नहीं

गया.... और उसके बाद हमारी अंग्रेज़ी क़ौम ने और ख़ासतौर से एच०आर०नेवल ने जो फैज़ाबाद गज़ेटियर तैयार किया था, उसमें शैतानी से दर्ज किया गया कि बाबर अयोध्या में एक हफ्ता ठहरा और उसी ने क़दीम राम-मन्दिर धराशायी किया'|"8

क्षुद्र राजनैतिक स्वार्थ सदैव मानवता के लिए घातक होते हैं, लेकिन विडम्बना यह है कि हमारे राजनेता इसकी चिन्ता नहीं करते। कमलेश्वर ने मुहम्मद अली जिन्ना के माध्यम से इस वास्तविकता का खुलासा किया है- ''कोई सम्राट अपने फैसलों को कई बहानों और तरीकों से बदल सकता है। वह प्रधानमंत्री सिनेट या सलाहकारों का सहारा लेकर अपनी.... इज्ज़त बचा सकता है। लेकिन जनता के लीडरों की जो नयी ज़मात आयी है, वह अपने सार्वजनिक उद्रेक में जो कुछ कह जाती है, उन स्थापनाओं से पीछे नहीं हट सकती.... यही मुहम्मद अली जिन्ना की विडम्बना और त्रासदी है। उन्होंने एक बार सार्वजनिक तौर पर इण्डिया का विभाजन मांग लिया, तो फिर उनका मन चाहे जितना पछतावा करे, पर वे उस मांग से पीछे नहीं हट सकते.... हटेंगे तो वे अपना नेतृत्व खो देंगे।.... किसी नेता को यह गवारा नहीं होता। जनता की भावनाओं को भड़का कर पैदा किए गए आन्दोलनों की यही ताकत और कमज़ोरी है.... एक बार जो कह दिया गया, वह बाद में अनुचित और गलत लगने पर भी उसे बदला नहीं जा सकता। अगर बदला गया तो रूढ़ और घटिया ताकतें, परिवर्तित विचार की दुश्मन बनकर सामने आ जाती है।''9

सामाजिक तथा धार्मिक धरातल पर 'कितने पाकिस्तान' पर चर्चा करते हुए कमलेश्वर ने समाज की प्रत्येक उस घटना को कुरेदा है, जिसके मूल में पाकिस्तान पनपे या पनपने की सम्भावना है। फिर चाहे वह ब्राह्मण-ग्रंथों की वर्ण-व्यवस्था हो, चाहे देवलोक के निरकुंश शासन में नारी-दुर्दशा, चाहे साम्राज्यवाद, पूँजीवाद, उपनिवेशवाद हो या नस्लवाद....। साहित्य को समाज का दर्पण मानने वाले साहित्यकारों को भी कमलेश्वर ने नहीं छोड़ा, जिन्होंने समाज की विसंगतियों एवं विद्रूपताओं के कारण व समाधान ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में खोजने हेतु इतिहास के पन्नों पर पड़ी धूल को हटाने के लिए, अपने ज़ेहन की गर्द को हटाने का प्रयास नहीं किया।

मानवीय जीवन-मूल्यों में कमलेश्वर की गहरी आस्था है। प्राचीन काल से ही जीवन-मूल्यों में द्वन्द्व की स्थिति बनी रही है। प्राचीन संस्कृति में देवताओं का जीवन पूर्णतया भोग-विलास से युक्त था। नारी उनके लिए मात्र भोग की वस्तु थी। प्रेम, करुणा, विश्वास, पवित्रता जैसे पावन मूल्यों की समझ उनके पास नहीं थी- ''तुम्हारे पास केवल वासना है, प्रेम नहीं है। केवल वैयक्तिक श्रेष्ठता का द्वेष है, इसलिए मित्रता नहीं। तुमने स्त्री को मात्र भोग्या मानकर अवैध सन्तानों का देवलोक स्थापित किया, पर देवलोक के पास कोई संस्कार या परम्परा नहीं।''10

दूसरी तरफ, मानव-समाज ने अपने लिए प्रेम, करुणा, दया, सहानुभूति, मित्रता जैसे मानवीय मूल्यों की स्थापना की। इन्हीं मानव-मूल्यों के प्रभाव के कारण हिप्पी सभ्यता का 'गिलगमेश' अपने मित्र एकिन्दू की अप्राकृतिक मौत पर चीख उठता है और कहता है- ''सुनो देवताओं, सुनो! पृथ्वी सम्राट गिलगमेश की आवाज़। यह दूसरी आवाज़ है, यह भोगविलास और पशुवत् दैहिक ऐश्वर्य की आवाज़ नहीं, यह मनुष्य की पीड़ा, दुःख, श्रम और मृत्यु से उसे मुक्त करने की आवाज़ है। मैं पीड़ा से लड़ूँगा... यातना सहूँगा.. कुछ भी हो मैं अपने मित्र और मनुष्य मात्र के लिए मृत्यु को पराजित करूँगा। मैं मृत्यु की औषधि खोजकर लाऊँगा।11

गिलगमेश के लिए मृत्यु से मुक्ति का अभिप्राय उस अप्राकृतिक मृत्यु से मुक्ति है, जो नित्य नए पाकिस्तान बनाने की प्रक्रिया में नागासाकी और हिरोशिमा के लोगों ने सही; कारगिल के जवान सैनिकों ने सही; नस्लवाद के नाम पर शुद्र शम्बूक ने सही और आज आस्ट्रेलिया में ऐसी ही मृत्यु भारतीयों को निगल रही है।

और ऐसी नृशंस अप्राकृतिक मृत्यु ने सबसे अधिक औरत जाति को निगला है- कभी सती प्रथा के नाम पर, कभी तंदूर कांड, कभी बलात्कार के नाम पर और कभी भ्रूण-हत्या के नाम पर। सिरिमावो भंडारनायके, चन्द्रिकाकुमार तुंगे, इन्दिरा गांधी एवं बेनज़ीर भुट्टो की हत्या विश्व-सभ्यता पर कलंक है। कमलेश्वर अपने पात्र बूटा सिंह के माध्यम से कहलाते हैं- ''हिन्दुस्तान-पाकिस्तान की लकीर खिंच गई, तो खिंच जाए... लेकिन हिन्दु-मुसलमान के नाम पर औरत की इज़्ज़त का बंटवारा तो नहीं हो सकता।''12 ये कमलेश्वर के संकल्पित मूल्य हैं।

आम जनता कभी भी कोई विभाजन नहीं चाहती। विभाजन के शिकार लोगों की त्रासदी को इस कालजयी उपन्यास-रचना के शब्दों में देखिए- ''पाकिस्तान जाने का किराया भाड़ा भी जुट गया, तो भी ई हमार खेतवा से कईसे जाई पाकिस्तान?.... जिन्दगी त हिआं गुजारल, अब मरे किनारे अइलीत पाकिस्तान जाई? अब चाहे कुरआन शरीफ् का आयत बोले या तुम्हारे गीता के किसन भगवान... हम न जाइब पाकिस्तान...।''13

ये मात्र शब्द ही नहीं है, वरन् सीधे-सादे ग़रीब-देहाती और सच्चे अर्थों में 'एक भारतीय' (चाहे वह मुस्लमान हो या हिन्दु) के हृदय का कातर-क्रन्दन है; जिसके लिए किसी भी स्थिति में अपनी जड़ों से कटना संभव नहीं है। उसके लिए भारत, मात्र ज़मीन का एक टुकड़ा-भर नहीं है। यहाँ की मिट्टी की सोंधी गंध उसके रक्त व मांस में रची-बसी है। अपनत्व से पूरित इस संबंध को तोड़ना उसके लिए कल्पनातीत है। उनके मनोद्‌गारों की यह अनुगूंजचिरकाल तक मानवता की हिम्मत बँधाए रखेगी।

आए दिन सीमा-विवाद, अपहरण एवं छुआछूत बढ़ रहा हैं। यों देखा जाए, तो ''हर सभ्यता हर धर्म में ब्राह्मणवाद पैदा हुआ। भारत में तो वह बहुतदेर से आया पर मिस्र की सभ्यता में भी पुरोहितवाद और ब्राह्मणवाद पैदा हुआ... ये पुरोहित-पुजारी और ब्राह्मण ही मिस्र की सभ्यता के पतन का कारण बने।''14 वैसे देखा जाए तो हिन्दोस्तान के पतन का मुख्य कारण भी हर स्तर पर पनपा यह ब्राह्मणवाद ही रहा हू ।

'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में कमलेश्वर ने भारत की कानून-व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न लगाया है। सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय व लोक अदालतें लोगों को न्याय देने में बुरी तरह से असफल हो रही हैं। विवादों को सुलझाने वाली अदालतें ख़ुद एक विवाद बन कर रह गई हैं। कमलेश्वर लिखते हैं- ''हिन्दुस्तान में सारी अदालतें कब्रिस्तान में तबदील हो चुकी हैं, उनमें अब सिर छुपाने की जगह बाकी नहीं है।15

आज निरपेक्ष विचार एवं सोच पीछे पड़ते जा रहे हैं और साम्प्रदायिक ताकतें आगे आ रही हैं। कमलेश्वर के विवेचित उपन्यास की आलोचना भी यही है- ''लोकमान्य तिलक ने अन्ततः सारे हिन्दुवादियों को जन्म दिया... सावरकर जैसे क्रान्तिकारी हिन्दूवादी हो गए। उनकी नस्ल ने नाथूराम गोडसे पैदा किया... आख़िर उसी ने गांधी जी की हत्या की... तो गांधी, नेहरू, पटेल, मौलाना आज़ाद के रहते हुएभी मुसलमानों के लिए उम्मीद बची ही कहां थी... दिलों में शक बैठ गया था कि सत्ता मिलते ही धीरे-धीरे नेहरू का सेक्यूलरिज़्म मूर्छित होता जाएगा और मूर्छित हिन्दुत्वहोश में आता जाएगा।''16

एक महत्वपूर्ण समस्या 'नस्लवाद' पर भी कमलेश्वर ने क़लम चलाई है। ''ये काले अफ़्रीकी हैं जिन्हें गोरी चमड़ी वाली साउथ अफ़्रीकी सरकार ने ही मरवाया है।''17 कमलेश्वर द्वारा लिखा यह वाक्य आतंकवाद के बहुआयामी रूप को स्पष्ट करता हुआ सिद्ध करता है कि आतंकवादी ए.के.47 द्वारा दहशत फैलाने वाला ही नहीं, बल्कि आज सरकार, राजनीति, साम्प्रदायिक ताकतें आतंकवाद व आतंकवादियों के दायरे में आ चुके हैं।

आज की विकट समस्या 'दूषित पर्यावरण' भी कमलेश्वर की दृष्टि से ओझल नहीं हो पाई। नागासाकी-हिरोशिमा का उदाहरण देते हुएकमलेश्वर जी ने परमाणु-प्रयोग पर पाबन्धी लगाने की बात कही है। सौहार्द-मिश्रित धीमी-सी व्यंग्यात्मकता के साथ कमलेश्वर कहते हैं- ''पोखरन के बाद हमारे सारे मोर या तो ख़त्म हो गए या देश छोड़ के चले गए... लेकिन क्या चगाई के बाद तुम्हारे खजूर के पेड़ों पर मधुमक्खियां अभी भी आती हैं...।''18 इसी सरोकार पर चिन्तन करते हुएवे आगे लिखते हैं- ''मधुमक्खियाँ, मोर, कपोत, बुलबुल, गौरय्या, खंजन, नीलकंठ, पपीहा, लाली, तितलियां और जुगनू अब हमारे चौबारों और छतों की मुंडेरों पर कभी नहीं आएंगे...।''19

इतिहास-लेखन की दृष्टि से 'कितने पाकिस्तान' को परखा जाए, तो स्पष्ट हो जाता है कि कोई भी इतिहास अन्तिम नहीं होता और न ही इतिहासकार निष्पक्षता का दावा कर सकता है। 'कितने पाकिस्तान' में इतिहासकार को शक के दायरे में लाकर कमलेश्वर ने एक नया चिन्तन पाठक को दिया है, जिस पर मनन् करना नितांत आवश्यक है। सामान्यतः इतिहास के अन्धानुकरण ने ही विकट समस्याओं को पैदा किया है। बाबरी मस्जिद, रामजन्मभूमि जैसे विवाद इतिहास के इसी अधूरे अध्ययन के परिणाम हैं। आवश्यकता केवल अध्ययन की नहीं, सूक्ष्म विश्लेषण की है। हमें इतिहास को एक मुनि की तरह पढ़ना चाहिए, तभी हम इतिहास के उलझाव में से सुलझाव निकाल पायेंगे। मथने के पश्चात् नवनीत और छाछ में से किसी एक का चुनाव हमीं ने करना है, जिसके लिए नीर-क्षीर विवेक की ज़रूरत है।

कथाकार के शब्दों में - ''किताबों में जो लिखा या लिखवाया जाता है और साक्षात्कारों में जो दर्ज कराया जाता है... पेशेवर क़लम घिस्सुओं द्वारा जिस तरह तथ्यों के सहारे दस्तावेज़ी इतिहास बनाया जाता है, वह इतिहास नहीं होता... इतिहास वह होता है जो दिलो-दिमाग़ की तख़्ती पर लिखा जाता है... और उस इबारत को कोई पढ़ न ले, इसलिए उसे फौरन मिटाया जाता है... उस मिटी हुई इबारत को सिर्फ वही अदीब पढ़ सकता है जो सुकरात, गौतम बुद्ध, ईसा या गांधी जी की भाषा पढ़ सकता है...।''20

कमलेश्वर को जनमानस पर अटूट विश्वास है मानवता के लिए प्रेम, करुणा, क्षमा, विश्वास एवं आस्था जरूरी है। उपन्यास के अन्त में कमलेश्वर 'बोधिवृक्ष' के माध्यम से शांति, प्यार व सौहार्दता की समझ विकसित करना चाहते हैं-

''...बोधिवृक्ष की जड़ें नीलकंठ की तरह विष पी लेती हैं... पहला बोधिवृक्ष मैं पोखरन में लगाऊँगा, फिर सरहद पार करके दूसरा वृक्ष मैं चगाई की पहाड़ियों में लगाऊँगा...''21 यही इस कालजयी उपन्यास-रचना की महती संकल्पना है।

संदर्भ

1. 'कितने पाकिस्तान' , कमलेश्वर, जुलाई 2001, राजपाल एण्ड सन्ज़, नई दिल्ली, भूमिका से
2. - वही
3. - वही
4. - वही
5. 'कितने पाकिस्तान' , कमलेश्वर, जुलाई 2001, राजपाल एण्ड सन्ज़, नई दिल्ली
6. 'कितने पाकिस्तान' , कमलेश्वर, जुलाई 2001, राजपाल एण्ड सन्ज़, नई दिल्ली, पृष्ठसं०-9
7. - वही, पृष्ठसं०-72
8. - वही, पृष्ठसं०-73
9. - वही, पृष्ठसं०-53
10. - वही, पृष्ठसं०-29
11. - वही, पृष्ठसं०-34
12. - वही, पृष्ठसं०-38
13. - वही, पृष्ठसं०-57
14. - वही, पृष्ठसं०-85
15. - वही, पृष्ठसं०-105
16. - वही, पृष्ठसं०-104
17. - वही, पृष्ठसं०-87
18. - वही, पृष्ठसं०-361
19. - वही, पृष्ठसं०-362
20. - वही, पृष्ठसं०-264
21. - वही, पृष्ठसं०-362-363